भारतीय रिज़र्व बैंक के इतिहास पर परिप्रेक्ष्य

डॉ. आशुतोष रारावीकर^ द्वारा

यह आलेख भारतीय रिज़र्व बैंक के इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि डालता है और उसमें निहित खजाने को उजागर करता है। पाँच खंडों में विभाजित, रिज़र्व बैंक का इतिहास इसकी नीतियों, संचालन और संस्थागत विकास का एक व्यावहारिक विवरण है। यात्रा के दौरान, इसकी सार्वजनिक नीति पहल और संस्थागत, संरचनात्मक और वित्तीय सुधारों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को बदल दिया। यह न केवल भारत के केंद्रीय बैंक का संस्थागत इतिहास है, बल्कि भारत के आर्थिक और वित्तीय इतिहास का एक प्रमुख हिस्सा भी है। स्पष्ट, रोचक और विश्लेषणात्मक तरीके से प्रस्तुत, यह हर किसी के लिए ज्ञान का एक अनमोल भंडार है।

परिचय

'द रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया' शृंखला का पाँचवाँ खंड हाल ही में रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित किया गया है। इसके साथ ही इसने एक नया मील का पत्थर पार किया है, क्योंकि भारत के केंद्रीय बैंक ने अपने अस्तित्व के 88 वर्षों में से 73 वर्षों के इतिहास का दस्तावेजीकरण पूरा कर लिया है, जिससे इसके जीवन के एक बड़े हिस्से पर प्रकाश पड़ता है। यह आलेख रिज़र्व बैंक की यात्रा और अर्थव्यवस्था में उसके योगदान का एक संक्षिप्त दृश्य प्रस्तुत करता है जिसने समय की रेत पर अपने पदचिह्न छोड़े। खंड II इतिहास को दर्ज करने के महत्व को समझाता है और आर्थिक इतिहास में विकास की रूपरेखा तैयार करता है। खंड III दुनिया भर के केंद्रीय बैंकों के प्रकाशित इतिहास का जायजा लेता है। खंड IV रिज़र्व बैंक के इतिहास खंडों को तैयार करने की प्रक्रिया की व्याख्या करता है और उनकी विशेषताओं पर प्रकाश डालता है। खंड V पहले चार इतिहास खंडों की सामग्री का सारांश प्रस्तुत करता है। खंड VI नवीनतम पांचवें खंड पर विस्तार से बताता है। खंड VII समग्र दृष्टिकोण देता है। खंड आठ में निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

II. इतिहास क्यों?

आरबीआई इतिहास के चौथे खंड के विमोचन पर अपने स्वागत भाषण में, तत्कालीन गवर्नर डॉ. सुब्बाराव ने कहा, "...कम से कम अर्थशास्त्र और वित्त के मामलों में, इतिहास खुद को दोहराता है, इसलिए नहीं कि यह इतिहास का अंतर्निहित गुण है, बल्कि इसलिए कि हम इतिहास से नहीं सीखते और उसे दोहराने देते हैं।" इतिहास एक अनमोल शिक्षक है। इतिहास का दस्तावेज़ीकरण कई कारणों से महत्वपूर्ण है। सबसे पहले, इतिहास परीक्षा की घड़ी में हमारे विश्वास को मजबूत और जीवंत रखता है और मुश्किल चुनौतियों से निपटने में हमारी मदद करता है। दूसरा, अतीत की उपलब्धियाँ वर्तमान प्रदर्शन के लिए प्रेरणा देती हैं जो हमारे भविष्य का निर्माण करती हैं। तीसरा, ऐतिहासिक दस्तावेज़ स्थायी संस्थागत स्मृति के रूप में कार्य करते हैं। वे समकालीन नीतियों, विचार प्रक्रियाओं और निर्णयों को ठोस रूप से सामने लाते हैं। वे समय और संदर्भ विशिष्ट नीति प्रतिक्रियाओं से अंतर्दृष्टि प्राप्त करके नीति निर्माताओं को नीति संबंधी दुविधाओं को हल करने में मार्गदर्शन करते हैं। आर्थिक नियमितताएं इतिहास से बेहतर ढंग से समझी जाती हैं और नीति निर्माताओं को भविष्यवाणियां करने और ब्लैक स्वान घटनाओं की तैयारी करने में सक्षम बनाती हैं। चौथा, इतिहास ज्ञान के स्थायी भंडार के रूप में कार्य करता है। यह आर्थिक साहित्य में एक योगदान है और शोधकर्ताओं के लिए एक मूल्यवान संदर्भ के रूप में कार्य करता है। पांचवां, इतिहास के दस्तावेज़ संस्थागत स्मृति बनाते हैं - एक अनमोल और स्थायी ज्ञान आधार - जो हर किसी को उनके व्यक्तिगत, सामाजिक, सार्वजनिक और व्यावसायिक जीवन और संबंधित कार्य क्षेत्रों में मदद करता है। अंततः, इतिहास का दस्तावेज़ीकरण एक मूल्यवर्धन है। आवधिक प्रकाशनों के विपरीत, जो आम तौर पर निकट अवधि के लिए तथ्य पत्रक होते हैं, इतिहास का प्रकाशन एक दिलचस्प कहानी है जो लंबी अवधि में विकास को प्रदर्शित करता है। इसमें पहले वाले तस्वीरें या स्नैपशॉट हैं जबकि बाद वाली एक पूरी फिल्म है जो पूरी कहानी को उजागर करती है और गहरी अंतर्दृष्टि देती है।

आर्थिक इतिहास

आर्थिक इतिहास अर्थशास्त्र को इतिहास के साथ जोड़ता है। आर्थिक इतिहास का क्षेत्र उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में यह

---

^ लेखक आर्थिक और नीति अनुसंधान विभाग के निदेशक हैं।

लेखक, डॉ. तीर्थंकर रॉय को उनके बहुमूल्य इनपुट के लिए और डॉ. सितिकंठ पट्टनायक और डॉ. डी.पी. रथ को उनके प्रोत्साहन के लिए आभार व्यक्त करता है।

यहाँ व्यक्त किए गए विचार लेखक के हैं और जरूरी नहीं कि वे भारतीय रिज़र्व बैंक के विचारों का प्रतिनिधित्व करते हों।

पता लगाने के लिए शुरू हुआ कि पश्चिमी यूरोपीय और अमेरिकी क्यों समृद्ध हुए और उत्पादकता-आधारित विकास को हासिल किया। इसमें आर्थिक विकास और असमानता के कारणों को खोजने का प्रयास किया गया। वैश्विक व्यापार, निवेश और औद्योगीकरण में वृद्धि मुख्य प्रेरक शक्तियाँ थीं। कार्ल मार्क्स, एडम स्मिथ और मैक्स वेबर जैसे अर्थशास्त्रियों ने प्रतिपादित किया कि सरकारी हस्तक्षेप के बिना प्रतिस्पर्धी बाजारों ने काम के लिए प्रोत्साहन पैदा किया जिससे उत्पादकता में वृद्धि हुई। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में, एशिया और अफ्रीका में नव स्वतंत्र राष्ट्रों ने अपने विकास के लिए आत्मनिर्भरता हासिल करने का प्रयास किया। अस्सी के दशक में पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं के नेतृत्व में ऋण संकट ने पूंजीवाद के विरुद्ध आशंकाओं को कुछ हद तक कम कर दिया। 2000 के बाद से, चीन और भारत के आर्थिक उद्भव के साथ, इस क्षेत्र ने अफ्रीका और एशिया के इतिहास पर ध्यान केंद्रित किया। पिछले दशक के दौरान, देशों के बीच असमानता, राज्यों ने आर्थिक प्रणाली बनाने की क्षमता कैसे हासिल की, और पर्यावरण और अर्थव्यवस्थाओं में बदलाव के बीच संवाद सहित नए अनुसंधान क्षेत्र सामने आए। केंद्रीय बैंकों का इतिहास आर्थिक इतिहास का एक हिस्सा है। अब हम इस खंड का अध्ययन करते हैं।

III. केंद्रीय बैंकों का इतिहास

केंद्रीय बैंक अर्थव्यवस्था और समाज के केंद्र में हैं। उनके संचालन और नीतियां लाखों लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं। उनके इतिहास का प्रकाशन एक स्थायी संस्थागत भंडार बनाता है। ये दस्तावेज़ उनकी अर्थव्यवस्थाओं को आकार देने में केंद्रीय बैंकों द्वारा निभाई गई भूमिका की प्रभावशीलता को दर्शाते हैं। घटनाओं और नीतियों का विश्लेषण और व्याख्या नीति निर्माताओं और उनके सलाहकारों के लिए एक स्थायी संदर्भ के रूप में कार्य करती है। आर्थिक साहित्य में, हमें कुछ प्रमुख केंद्रीय बैंकों के प्रकाशित इतिहास मिलते हैं। इनमें प्रमुख हैं यूएस फेडरल रिज़र्व , बैंक ऑफ इंग्लैंड, बैंके डी फ्रांस और जर्मन बुंडेसबैंक। अन्य कम ज्ञात बैंक ऑफ़ कनाडा, रिज़र्व बैंक ऑफ़ ऑस्ट्रेलिया, बैंक ऑफ़ जापान और बैंक ऑफ़ इटली हैं। बैंक ऑफ इंग्लैंड की स्थापना संबंधी इतिहास में जॉन क्लैफम की 'द बैंक ऑफ इंग्लैंड: ए हिस्ट्री', जॉन फोर्ड की 'द बैंक ऑफ इंग्लैंड एंड पब्लिक पॉलिसी, 1941-1958', एलिजाबेथ हेनेसी की 'ए डोमेस्टिक हिस्ट्री ऑफ द बैंक ऑफ इंग्लैंड, 1930-1960', और फ़ॉरेस्ट कैप्पी की 'द बैंक ऑफ़ इंग्लैंड 1950 से 1979'शामिल हैं। इन पुस्तकों के कवरेज में सरकार के साथ केंद्रीय बैंक का जुड़ाव, विभिन्न गवर्नरों के तहत उनकी नीतियां, आंतरिक कामकाज, संगठन, कार्मिक नीति, विकास की अवधि, नवाचार और मुद्रास्फीति शामिल हैं। एलन मेल्टज़र द्वारा लिखित 'ए हिस्ट्री ऑफ द फेडरल रिज़र्व ' एक शोध कार्य है। इतिहास के अलावा, यह फेड की नीतियों से संबंधित प्रमुख व्यापक आर्थिक संकटों को भी समझता है। जैकब डी हान द्वारा लिखित 'द हिस्ट्री ऑफ द बुंडेसबैंक: लेसन्स फॉर द यूरोपियन सेंट्रल बैंक' कोई आधिकारिक इतिहास नहीं है। इसमें, हम बुंडेसबैंक के मुद्रास्फीति के सफल प्रबंधन और बुंडेसबैंक की नीतियों के आकलन से ईसीबी के लिए सबक सीखते हैं। बैंक डी फ्रांस की स्थापना संबंधी इतिहास पेरिस स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स के एक अर्थशास्त्री द्वारा लिखा गया है। यह बैंक और सरकार के बीच संबंधों पर प्रकाश डालता है। हालाँकि कई केंद्रीय बैंकों के संक्षिप्त इतिहास उनकी वेबसाइटों पर उल्लिखित हैं, लेकिन प्रकाशित पुस्तक के रूप में तैयार किए गए इतिहास केवल कुछ ही हैं जैसा कि ऊपर बताया गया है। भारतीय रिज़र्व बैंक दुनिया के उन चुनिंदा देशों में से एक है जिन्होंने अपने इतिहास के दस्तावेज़ीकरण और प्रकाशन का काम शुरू किया है।

IV. रिज़र्व बैंक का इतिहास

रिज़र्व बैंक के इतिहास के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता। रिज़र्व बैंक के पहले भारतीय गवर्नर सी.डी.देशमुख के अनुसार यह भारत का वित्तीय इतिहास है। पूर्व रिज़र्व बैंक गवर्नर बिमल जालान के शब्दों में, "रिज़र्व बैंक का इतिहास 10 प्रतिशत उसका अपना इतिहास और 90 प्रतिशत देश की अर्थव्यवस्था का इतिहास था और इस प्रकार भारत में आर्थिक विकास पर शोध के लिए एक खजाना था"। इसके महत्व को समझते हुए, रिज़र्व बैंक का इतिहास तैयार करने की प्रक्रिया 1967 में भारत के मौद्रिक क्षेत्र के इतिहास और प्रबंधन के

संकलन और फिर 1970 में पहले इतिहास खंड के प्रकाशन के साथ शुरू हुई। यह एक व्यवस्थित प्रक्रिया से गुजरता है।

तैयारी की प्रक्रिया

इतिहास लेखन की प्रक्रिया व्यापक शोध और विश्लेषण पर आधारित है। इतिहास के खंड आर्थिक और नीति अनुसंधान विभाग की एक आंतरिक इकाई, हिस्ट्री सेल द्वारा तैयार किए जाते हैं। केंद्रीय बोर्ड की मंजूरी से एक सलाहकार समिति नियुक्त की जाती है जिसमें रिज़र्व बैंक के बाहर के विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ शामिल होते हैं। किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति को लेखक नियुक्त किया जाता है। सलाहकारों की एक टीम भी नियुक्त की जाती है जिसमें रिज़र्व बैंक की सेवा से सेवानिवृत्त वरिष्ठ अधिकारी शामिल होते हैं। खंड की सामग्री की संकल्पना के लिए एक अवधारणा पत्र तैयार किया जाता है। ऐतिहासिक मूल्य के रिकॉर्ड आरबीआई अभिलेखागार और रिज़र्व बैंक के विभिन्न विभागों से एकत्र किए जाते हैं। अन्य प्रासंगिक जानकारी, डेटा और प्रकाशन भी संकलित किए गए हैं। इसके अलावा, मौखिक साक्ष्य के माध्यम से इतिहास को दर्ज करने के लिए, विचाराधीन अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के साथ काम करने वाले और जुड़े हुए व्यक्तियों के साथ चर्चा की जाती है। इनमें पूर्व गवर्नर, उप गवर्नर, अर्थशास्त्री और नौकरशाह शामिल हैं। सलाहकार समिति की बैठकें समय-समय पर आयोजित की जाती हैं और उनमें विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की जाती है। एक बार मसौदा तैयार हो जाने के बाद, केंद्र सरकार से टिप्पणियां मांगी जाती हैं। इन पर विचार करने के बाद खंड को अंतिम रूप दिया जाता है और प्रकाशित किया जाता है। 'द रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया' शीर्षक से, इतिहास अब तक प्रकाशित पांच खंडों में फैला हुआ है (सारणी 1)।

मुख्य विशेषताएं

रिज़र्व बैंक के इतिहास में कई विशिष्ट विशेषताएं हैं। सबसे पहले, यह एक प्रामाणिक खाता है, क्योंकि यह आधिकारिक और प्रामाणिक रिकॉर्ड और स्रोतों पर आधारित है। दूसरा, यह एक निष्पक्ष दस्तावेज़ है. तथ्य यह है कि इसे एक सलाहकार समिति के मार्गदर्शन में तैयार किया जाता है जिसमें आम तौर पर रिज़र्व बैंक के बाहर के प्रतिष्ठित लोग शामिल होते हैं जो निष्पक्षता

Table 1: एक नज़र में भारतीय रिज़र्व बैंक का इतिहास

खंड सं.	प्रकाशन का वर्ष	पूर्ण अवधि	संपादकीय/ सलाहकार समिति के अध्यक्ष	प्रकाशक
1	1970	1935-51	सीडी देशमुख	भारतीय रिज़र्व बैंक
2	1998	1951-67	सी. रंगराजन	ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस
3	2005	1967-81	सी. रंगराजन	भारतीय रिज़र्व बैंक
4	2013	1981-97	बिमल जालान	अकादमिक फाउंडेशन
5	2022	1997-2008	नरेंद्र जाधव	कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस

प्रदान करता है। लेखकों की टीम को दी गई स्वतंत्रता इसे आधिकारिक रिकॉर्ड होने से मुक्त करती है और पारदर्शिता बनाए रखती है। तीसरा, प्रत्येक खंड एक सार्थक ऐतिहासिक चरण की व्याख्या के लिए पर्याप्त लंबी अवधि को कवर करता है। इतिहास खंडों की अवधि के विश्लेषण से पता चलता है कि इन खंडों की अवधि 11 से 16 वर्ष तक थी। खंड 1, 2 और 4 प्रत्येक 16 वर्ष की अवधि के लिए थे, जबकि खंड 3 14 वर्ष की अवधि के लिए था। खंड 5 की अवधि 11 वर्ष में सबसे छोटी थी। सभी खंडों की औसत अवधि लगभग 14 वर्ष है। चौथा, इतिहास के खंड काफी अंतराल के साथ लिखे गए हैं। इससे उचित मूल्यांकन में मदद मिलती है, क्योंकि समय के साथ कार्यों और निर्णयों का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। अब तक प्रकाशित पांच खंडों के लिए खंड की संदर्भ अवधि के अंतिम वर्ष और खंड के प्रकाशन के वर्ष के बीच का अंतराल 14 से 31 वर्ष के बीच है। खंड 5 के लिए अंतराल सबसे छोटा और खंड 2 के लिए सबसे बड़ा था। औसत अंतराल 21 वर्ष था। पांचवां, इतिहास के खंडों में कालानुक्रमिक और कार्यात्मक दोनों मिश्रण हैं। इन खंडों में बैंक की नीतियों और संचालन के विकसित होने की जानकारी और विश्लेषण शामिल हैं। छठा, इतिहास तैयार करने के लिए स्रोतों की एक विस्तृत शृंखला का उपयोग किया जाता है जिसमें आधिकारिक फाइलें, बोर्ड के संकल्प, परिपत्र, शीर्ष प्रबंधन के भाषण, इलेक्ट्रॉनिक संसाधन, अन्य नियामक निकायों और सरकार से सामग्री, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं आदि के आलेख शामिल हैं। यह प्रकाशन को समृद्ध करता है। सातवां, व्यापक प्रसार और पहुंच के लिए, इतिहास की पुस्तकों को पुस्तक के

रूप में मुद्रित किया जाता है और साथ ही उचित समय पर रिज़र्व बैंक की वेबसाइट पर भी रखा जाता है। जबकि दो खंड रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित किए गए थे, तीन निजी प्रकाशकों के माध्यम से प्रकाशित किए गए थे। अंत में, व्यापक जानकारी और विश्लेषण के साथ, जिसमें अब तक अप्रकट जानकारी भी शामिल है, और एक स्पष्ट भाषा, पाठक-अनुकूल शैली और आसानी से पकड़ में आने वाले आकार में लिखा गया है, रिज़र्व बैंक का इतिहास हर किसी के लिए दिलचस्प है।

V. चार खंड

रिज़र्व बैंक के इतिहास के पहले चार खंडों की कहानी का सार नीचे दिया गया है।

पहला खंड (1935-51)

इस खंड की एक आकर्षक विशेषता यह है कि यह भारत में बैंकिंग, विनिमय और मौद्रिक प्रणाली के बारे में जानकारी देता है जो रिज़र्व बैंक की स्थापना से एक सदी पहले तक प्रचलित थी। इस खंड को चार चरणों में विभाजित किया गया है, प्रारंभिक (1935 तक), संरचनात्मक (1935-39), युद्ध 1939-45, और युद्धोपरांत (1945-51)। प्रारंभिक अवधि में भारत में केंद्रीय बैंकिंग की उत्पत्ति, रिज़र्व बैंक की स्थापना से पहले मौजूदा बैंकिंग, मुद्रा और विनिमय प्रणाली और आरबीआई अधिनियम का विवरण शामिल है। भारत के वित्तीय क्षेत्र पर बढ़ती मांगों को देखते हुए, भारतीय मुद्रा और वित्त पर रॉयल कमीशन (1925) ने मौद्रिक स्थिरता बनाए रखने और देश की जरूरतों को पूरा करने के लिए मौद्रिक भंडार को एकत्रित करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्माण की सिफारिश की। रिज़र्व बैंक ने 1 अप्रैल, 1935 को अपना परिचालन शुरू किया, शुरुआत में मुद्रा जारी करने, बैंकों और सरकार के लिए बैंकर, और ग्रामीण सहकारी समितियों के विकास और कृषि को ऋण जैसे गैर-पारंपरिक कार्यों के साथ शुरुआत की। प्रारंभिक अवधि में रिज़र्व बैंक की नीतियां, संचालन, बैंकरों के बैंक के रूप में इसकी भूमिका, कृषि वित्त की दिशा में प्रयास और बोर्ड और शेयरधारकों के बारे में जानकारी शामिल है। रिज़र्व बैंक की स्थापना के बाद, द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने से पहले के शुरुआती वर्षों में, रिज़र्व बैंक को विनिमय नियंत्रण सौंपा गया था। रिज़र्व बैंक द्वारा युद्ध व्यय का वित्तपोषण करने से मुद्रास्फीति बढ़ी। युद्ध के वर्षों के दौरान का विवरण संगठनात्मक मामलों, कृषि ऋण, विनिमय नियंत्रण, युद्ध के वित्तपोषण, वाणिज्यिक बैंकिंग, स्टर्लिंग ऋण की वापसी और युद्ध के बाद मुद्रा व्यवस्था से संबंधित है। युद्ध के बाद की अवधि के विश्लेषण में बैंक में संगठनात्मक परिवर्तन, विभाजन से संबंधित मामले, विनिमय और प्रबंधन, वैश्विक वित्तीय संस्थान, कृषि वित्त के प्रावधान में कदम, वाणिज्यिक बैंकों के विनियमन के लिए अधिनियम और नियोक्ता के रूप में बैंक की भूमिका शामिल है। तत्कालीन गवर्नर सी.डी. देशमुख के दृष्टिकोण और पहल से, अनुसंधान करने और उसके आधार पर बैंक को मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए 1945 में रिज़र्व बैंक में अनुसंधान और सांख्यिकी विभाग की स्थापना की गई थी। रिज़र्व बैंक की दूरदर्शिता सराहनीय थी क्योंकि उस समय समकालीन विकसित देशों ने भी केंद्रीय बैंकों में अनुसंधान की भूमिका को पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं दी थी। युद्ध के बाद की अवधि में, मौद्रिक नीति मुद्रास्फीति नियंत्रण पर केंद्रित थी। इसने अपनी स्थापना के समय एक निजी स्वामित्व वाली इकाई से एक राष्ट्रीयकृत संस्थान तक की यात्रा भी की। आजादी के बाद इसने अर्थव्यवस्था की नई जिम्मेदारी संभाली। ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति और अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति की नियुक्ति की गई।

दूसरा खंड (1951-67)

दूसरा खंड भारतीय स्वतंत्रता के पचासवें वर्ष के दौरान प्रकाशित हुआ था। इसकी अवधि में आज़ादी के बाद के पहले दो दशकों का बड़ा हिस्सा शामिल है। इस खंड का मुख्य विषय रिज़र्व बैंक की सार्वजनिक नीतिगत पहल, संस्था निर्माण और केंद्रीय बैंकिंग की नींव स्थापित करना है। यह विस्तार से बताता है कि कैसे केंद्रीय बैंकिंग अपने चार मुख्य स्तंभों यथा मौद्रिक नीति, वाणिज्यिक बैंकों का विनियमन और विकास, कृषि ऋण का संस्थानीकरण और उद्योगों को वित्तपोषण का संस्थानीकरण पर बनाई गई थी। अल्पकालिक खींचतान

और सरकारी वित्तपोषण की आवश्यकताओं के साथ मौद्रिक नीति का इंटरफ़ेस, तदर्थ राजकोष बिलों की एक प्रणाली के माध्यम से बजट घाटे का वित्तपोषण, मुद्रा जारी करने के लिए न्यूनतम विदेशी मुद्रा भंडार के रखरखाव की प्रणाली शुरू करना, परिवर्तनीय नकदी आरक्षित अनुपात (सीआरआर), और वैधानिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के बारे में बताया गया है।

बैंकिंग संकट की पृष्ठभूमि पर, रिज़र्व बैंक ने देश की बैंकिंग प्रणाली को मजबूत किया और 1,500 रुपये के प्रारंभिक बीमा कवर के साथ जमा बीमा निगम की स्थापना के माध्यम से जमा बीमा की शुरुआत की। इस अवधि के दौरान, रिज़र्व बैंक को विकासशील और उभरते राष्ट्रों की अजीबोगरीब मांगों का सामना करना पड़ा। इसने अपने विकास, विविधीकरण और मजबूती के माध्यम से देश के वित्तीय और आर्थिक परिदृश्य में बदलाव लाया। सहकारी आन्दोलन का विकास प्रारम्भ किया गया। श्रॉफ समिति[1] की सिफ़ारिश के अनुसार, रिज़र्व बैंक ने औद्योगिक क्षेत्र के दीर्घकालिक वित्तपोषण के लिए संस्थानों की स्थापना की। उद्योग और कृषि के लिए संस्थागत ऋण का आधार बनाया गया। यह किसी भी केंद्रीय बैंक द्वारा उठाए गए असामान्य या गैर-पारंपरिक कार्यों में से एक है। वित्तीय मध्यस्थों और आस्तियों के निर्माण के माध्यम से बचत के संग्रहण को भी संस्थागत बनाया गया। यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया (यूटीआई) की स्थापना छोटी बचत को सीधे पूंजी बाजार में लाने के लिए की गई थी। ऐसे प्रयासों से समाज के वंचित वर्गों तक ऋण पहुंचा और देश की वित्तीय व्यवस्था विकसित हुई। बचत और ऋण दोनों के संस्थानीकरण के प्रयासों के परिणामस्वरूप कई लाभ प्राप्त हुए। वित्तीय प्रणाली के विकास ने मौद्रिक संचरण तंत्र को मजबूत किया। बैंक जमा में वृद्धि से निधि के लिए रिज़र्व बैंक पर उनकी निर्भरता कम हो गई, जिससे मौद्रिक साधनों का उपयोग मजबूत हुआ और मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता बढ़ गई। अधिक धनराशि जुटाने से सरकार की घाटे की वित्तपोषण आवश्यकताओं में भी कमी आई। वर्ष 1967 में विभिन्न संकटों और उनके समाधान के लिए नीतिगत प्रतिक्रियाओं के कारण एक सफलता देखी गई।

अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण की संस्था और भारतीय स्टेट बैंक के निर्माण जैसे नए परिदृश्यों द्वारा चिह्नित किया गया था। घाटे की वित्त व्यवस्था, पंचवर्षीय योजनाओं की शुरुआत, सार्वजनिक ऋण प्रबंधन, बैंकों का विनियमन और उनके मानदंड, केरल में बैंकिंग संकट, व्यवहार्यता प्रदान करने के लिए उनकी संख्या में कमी के माध्यम से वाणिज्यिक बैंकिंग का समेकन, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आईडीबीआई) जैसे संस्थानों की स्थापना के माध्यम से संस्थागत बुनियादी ढांचे का विकास, और रुपये का अवमूल्यन जैसे विभिन्न उपलब्धियों का दिलचस्प विवरण है। यह खंड राष्ट्र के विकास के लिए सरकार द्वारा दीर्घकालिक विदेशी निधीयन पर भी प्रकाश डालता है। यह कहानी बैंकों और सरकारों, बाहरी क्षेत्र, औद्योगिक वित्तपोषण, ग्रामीण वित्त, सरकारी वित्तपोषण, राज्य सरकारों के लिए बैंकिंग और मौद्रिक नीति से संबंधित है। इस पूरी प्रक्रिया में संगठन ने स्वयं में परिवर्तन देखा। इस खंड की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि बैंक के चुनिंदा दस्तावेज़ पहली बार प्रकाशित हुए हैं।

तीसरा खंड (1967-81)

रिज़र्व बैंक के सत्तर वर्ष पूरे होने पर तीसरा इतिहास खंड प्रकाशित हुआ। यह इस अवधि के दौरान भारत के वित्तीय बुनियादी ढांचे में देखे गए परिवर्तनों को रिकॉर्ड करता है। यह अवधि सभी वित्तीय गतिविधियों में रिज़र्व बैंक के बढ़े हुए विनियमन द्वारा चिह्नित की गई थी। प्रमुख घटना चौदह बैंकों का राष्ट्रीयकरण थी। बैंकिंग पर सामाजिक नियंत्रण ने वाणिज्यिक बैंकों के संचालन और अभिविन्यास को बदल दिया। देश के अर्ध-शहरी और ग्रामीण भागों में बैंकिंग का प्रसार हुआ। ऋण बड़े पैमाने पर वंचित वर्गों तक पहुँचा। घटते ऋण-जमा अनुपात की समस्या का समाधान करने और वंचित व्यक्तियों को ऋण

[1] निजी क्षेत्र के लिए वित्त समिति की नियुक्ति 1953 में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा की गई थी, जिसके अध्यक्ष एडी श्रॉफ थे।

उपलब्ध कराने के लिए लीड बैंक योजना शुरू की गई थी। इस प्रक्रिया के दुष्परिणाम बैंकों की दक्षता और व्यवहार्यता में गिरावट के साथ हुए जो बाद की अवधि में और नीचे आ गए। बैंकों पर सरकार के बड़े स्वामित्व के कारण दोहरे नियंत्रण की समस्या उत्पन्न हो गई। वित्तीय व्यवस्था गहरी हुई। रिज़र्व बैंक को यह मसला सुलझाना था कि किसे उधार देना है, कैसे और कितना देना है। वित्तीय क्षेत्र का विस्तार और विविधता हुई। आईडीबीआई और यूटीआई की स्थापना क्रमशः उद्योग को दीर्घकालिक वित्त प्रदान करने और छोटे बचतकर्ताओं को सुरक्षित आश्रय प्रदान करने के लिए की गई थी। बाद में, समन्वय संबंधी मुद्दों के कारण इन्हें रिज़र्व बैंक से अलग कर दिया गया।

1970 के दशक से, राजकोषीय नीति परिदृश्य पर हावी हो गई और मौद्रिक नीति को एक सहायक भूमिका निभानी पड़ी। मौद्रिक साधनों का उपयोग केवल तभी किया जाता था जब मुद्रास्फीति चिंताजनक अनुपात तक पहुंच जाती थी, और बाकी समय के दौरान, सरकार की वित्तीय जरूरतों को समायोजित किया जाता था। सीआरआर लागू किया गया था. कृषि उत्पादन की कमी के समय मौद्रिक प्रबंधन आपूर्ति-आधारित था। एसएलआर को कैप्टिव स्रोतों से सरकार के लिए संसाधन जुटाने के लिए लागू किया गया था। इसके परिणामस्वरूप ऋण की कमी के कारण इसका निर्देशित आवंटन हुआ। पुनर्वित्त की प्रणाली के साथ प्राथमिकता क्षेत्र ऋण को प्रोत्साहित किया गया। ब्याज दरें प्रशासित की गईं। तदर्थ राजकोषीय बिलों का नवीनीकरण होता रहा और इस प्रकार स्वचालित मुद्रीकरण की नींव पड़ी।

शाखा विस्तार के आलोक में बैंकों की व्यवहार्यता सुनिश्चित करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा निरीक्षण प्रणाली को फिर से तैयार किया गया था। व्यवसाय की संभावनाओं का पता लगाने और स्थानीय मुद्दों को हल करने के लिए कम आवृत्ति के साथ केंद्र-वार निरीक्षण एक नया केंद्र बन गया। जमा बीमा कवर सहकारी बैंकों तक बढ़ाया गया। निक्षेप बीमा और ऋण गारंटी निगम (डीआईसीजीसी) का गठन छोटे जमाकर्ताओं की सुरक्षा और छोटे उधारकर्ताओं को ऋण के लिए गारंटी कवर के प्रावधान के लिए दो संस्थाओं निक्षेप बीमा निगम (डीआईसी) और ऋण गारंटी निगम (सीजीसी) के विलय के माध्यम से किया गया था।

रिज़र्व बैंक राजकोषीय नीति की मजबूरियों और तेल के आघातों और बांग्लादेश युद्ध सहित सत्तर के दशक में अप्रत्याशित बाहरी आघातों के कारण उत्पन्न मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने में सफल रहा। विदेशी मुद्रा की कमी थी। ब्रेटन वुड्स प्रणाली ध्वस्त हो गई और लचीली विनिमय दरों की प्रणाली नई अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली के एक भाग के रूप में सामने आई। रिज़र्व बैंक ने विकासशील देशों की वकालत के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली के सुधार पर वैश्विक चर्चा में योगदान दिया और परिवर्तन की प्रक्रिया का प्रबंधन किया। नीति और प्राथमिकताओं, विशेष रूप से विनिमय नियंत्रण, विनिमय दर प्रबंधन और बैंकिंग में कई संकटों के कारण बार-बार प्रयोग और परिवर्तन करना पड़ा। नीतियां विकास और योजना प्राथमिकताओं के अनुरूप थीं। इस खंड में पहली बार रिज़र्व बैंक के बाह्य क्षेत्र प्रबंधन के बारे में विस्तार से बताया गया है। इस खंड में शामिल अन्य उपलब्धियों में नए मूल्यवर्ग के बैंक नोटों को डिजाइन करने, नए निर्गम कार्यालय और करेंसी चेस्ट खोलने और प्रबंधन टीमों, विभागों और कार्यालयों के विस्तार में रिज़र्व बैंक की पहल शामिल है।

चौथा खंड (1981-97)

चौथा खंड दो भागों में है। इस अवधि के पहले चरण में 1981-89 के दौरान समेकन और प्रारंभिक उदारीकरण शामिल था। यह खंड ग्रामीण ऋण, बैंकिंग पर्यवेक्षण, वित्त, राजकोषीय-मौद्रिक इंटरफेस, भुगतान संतुलन, विनिमय नियंत्रण और मौद्रिक नीति पर नीति के क्षेत्रों में विस्तार से बताता है। इसके बाद, यह 1989-97 के दौरान संकट और सुधारों के अगले चरण का विश्लेषण करता है जिसमें नब्बे के दशक की शुरुआत में भुगतान संतुलन संकट और इसके प्रबंधन के लिए इसके बाद शुरू किए गए सुधार शामिल हैं। सुधारों में बाहरी क्षेत्र में उदारीकरण, मौद्रिक नीति, ऋण प्रबंधन, बैंकिंग और वित्तीय संस्थानों और बाजारों में संस्थागत सुधार और ग्रामीण क्षेत्र और कृषि का विकास शामिल था। संगठनात्मक मामलों में संचार और संस्थागत सुधारों की पहल शामिल हैं।

इस अवधि के दौरान देश कई अनिश्चितताओं से जूझ रहा था, जैसे 1987 में सूखा, बैंकों की लाभप्रदता में कमी, प्रशासित ब्याज दरों के कारण मौद्रिक नीति की क्षमता में कमी, और निश्चित विनिमय दर प्रणाली के कारण बाहरी मोर्चे पर असंतुलन। इन परिस्थितियों में, मुद्रास्फीति को नियंत्रित करना, राजकोषीय असंतुलन को सुधारना, मौद्रिक स्थिरता प्राप्त करना और निर्यात प्रतिस्पर्धात्मकता को बहाल करना आवश्यक था । सरकार और रिज़र्व बैंक को बाहरी भुगतान के मोर्चे पर गंभीर दबाव से निपटना पड़ा। आर्थिक सुधारों पर एक प्रमुख कार्यक्रम शुरू किया गया जिसमें रिज़र्व बैंक एक महत्वपूर्ण भागीदार था। इसकी भूमिका में विचार बनाना, प्रस्तावों पर कार्रवाई करना और सुधारों को क्रियान्वित करना शामिल था।

ग्रामीण वित्तपोषण के लिए संस्थागत ढांचा 1982 में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना के माध्यम से बनाया गया था। मुद्रा बाजार सहित वित्तीय बाजारों को विकसित करने के प्रयास किए गए थे। भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) की स्थापना ने पूंजी बाजार के विकास को बढ़ावा दिया। सुखमय चक्रवर्ती समिति ने मौद्रिक और ब्याज दर नीति और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के प्रति दृष्टिकोण और दृष्टिकोण को बदल दिया। रुपये के अवमूल्यन के कारण निर्यात पुनर्जीवित हुआ। उदारीकृत विनिमय दर प्रबंधन प्रणाली (एलईआरएमएस) की स्थापना की गई। मौद्रिक नीति के साधनों में प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर बदलाव आया। नरसिम्हम समिति की सिफ़ारिशों के अनुसार वित्तीय क्षेत्र में सुधार किये गये। सरकार और रिज़र्व बैंक के बीच तदर्थ ट्रेजरी बिलों की प्रणाली को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने और राजकोषीय घाटे के स्वचालित मुद्रीकरण को रोकने के समझौते के साथ, रिज़र्व बैंक को अपनी मौद्रिक नीति संचालन में और अधिक स्थान मिला। वाणिज्यिक बैंकिंग में समेकन प्राप्त करने और गैर-बैंकिंग क्षेत्र में पर्यवेक्षण को मजबूत करने के प्रयास किए गए। इस प्रकार, यह खंड संकट के मद्देनजर आर्थिक प्रबंधन में बदलाव और भारत द्वारा अपनाए गए सुधारों के बाद के प्रक्षेप पथ की कहानी है जिसने इसे एक नई कक्षा में स्थापित किया है।

VI. पाँचवाँ खंड (1997-2008)

रिज़र्व बैंक के इतिहास का पाँचवाँ खंड इस अवधि के दौरान प्रमुख कार्यात्मक क्षेत्रों में इसकी नीतियों और संचालन के विकास की एक दिलचस्प कहानी है। इसका विषय 'परिवर्तन का प्रबंधन' है। यह अनुभव आज के गतिशील नीति परिवेश में प्रासंगिक है जिसमें परिवर्तन बहुत तेजी से हो रहा है और नीति निर्माता इससे गतिशील रूप से निपटने के लिए चुनौतियों का सामना करते हैं। यह कहानी व्यापक आर्थिक परिदृश्य की व्याख्या से शुरू होती है। अस्सी के दशक के मध्य से वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण और सरकारों में बदलाव के बावजूद इसकी निरंतर गति के साथ किए गए आर्थिक सुधारों के सकारात्मक परिणाम सामने आए और इसके परिणामस्वरूप आर्थिक विकास हुआ और सभी मापदंडों में सुधार हुआ। अर्थव्यवस्था एशियाई वित्तीय संकट से अछूती रही और स्थिर रही। रिज़र्व बैंक नए साधनों, बाज़ारों और सरकार के साथ उत्कृष्ट समन्वय, कानूनी परिशोधन और तकनीकी प्रगति से लैस मौद्रिक नीति के साथ वैश्विक प्रतिकूल परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना कर सकता है।

1997-2008 की अवधि एशियाई मुद्रा और वित्तीय संकट और वैश्विक वित्तीय मंदी की शुरुआत के बीच रही। इस अवधि के दौरान, तेजी से विकसित हो रहे व्यापक आर्थिक माहौल की पृष्ठभूमि में, रिज़र्व बैंक ने महत्वपूर्ण संस्थागत, संरचनात्मक और वित्तीय बाजार सुधारों की शुरुआत की और विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के तेजी से एकीकरण की सुविधा प्रदान की। मौद्रिक नीति के लिए जगह बनाई गई। रिज़र्व बैंक ने सरकार के साथ समझौतों के माध्यम से सरकारी घाटे के स्वचालित मुद्रीकरण की प्रणाली को चरणबद्ध तरीके से समाप्त कर दिया, मौद्रिक नीति संचालन उपकरणों को तर्कसंगत और मजबूत किया, अर्थात, रेपो दर और एक अद्वितीय तथा अभिनव मौद्रिक स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के माध्यम से मौद्रिक नियंत्रण के प्रमुख साधन के रूप में चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) की स्थापना;

भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड (सीसीआईएल) जैसे वित्तीय बाजार संस्थानों के निर्माण पर ध्यान केंद्रित किया गया; तत्काल सकल निपटान (आरटीजीएस) प्रणाली, डिलिवरी बनाम पेमेंट (डीवीपी), तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) और इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन सेवा (ईसीएस) जैसे भुगतान प्रणाली के बुनियादी ढांचे का निर्माण किया ; बैंकिंग और गैर-बैंकिंग क्षेत्रों के लिए नियामक और पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को मजबूत किया गया; वित्तीय स्थिरता प्राप्त करने और बनाए रखने के लिए अपने दृष्टिकोण को समायोजित किया; और व्यापक जनहित में और आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए कानूनी और अन्य संशोधनों के माध्यम से एक मजबूत कानूनी संरचना बनाई। ऐतिहासिक विधायी सुधारों में आरबीआई अधिनियम, 1934 में संशोधन शामिल है, जिसमें सीआरआर पर न्यूनतम सीमा और उच्चतम को हटा दिया गया है और रिज़र्व बैंक को सीआरआर जमाशेष पर ब्याज के भुगतान से रोक दिया गया है, बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 में संशोधन करके एसएलआर के लिए न्यूनतम दर को हटा दिया गया है; मौद्रिक प्रबंधन में लचीलापन और प्रभावशीलता प्रदान करना, विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम (एफईआरए) को निरस्त करना और एक स्पष्ट शासन परिवर्तन को चिह्नित करने हेतु विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम (एफईएमए) के तहत नए कानूनी ढांचे की स्थापना करना, , लचीलापन प्रदान करने और परिणाम सुनिश्चित करने के लिए एक मजबूत कानूनी संरचना स्थापित करना और सरकारी प्रतिभूति अधिनियम, 2006, भुगतान और निपटान प्रणाली अधिनियम, 2007 आदि जैसे कानूनों के माध्यम से जवाबदेही सुनिश्चित करना। इस प्रकार, विभिन्न महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल करने के माध्यम से वर्तमान आधुनिक प्रणाली की नींव और निर्माण किया गया था।

बाह्य क्षेत्र के विनियमन के परिणामस्वरूप उच्च पूंजी प्रवाह और विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि हुई। इसके कारण विभिन्न चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं जिन्हें पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रवाह और प्रतिक्रिया के लिए एक पदानुक्रमित दृष्टिकोण के माध्यम से निपटाया गया। ऋण के भीतर दीर्घकालिक प्रवाह के साथ-साथ इक्विटी में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) और विदेशी संस्थागत निवेश (एफआईआई) जैसे गैर-ऋण सृजन प्रवाह को प्रोत्साहित किया गया। सुधार की गति बाज़ार की स्थितियों से नियंत्रित होती थी। अच्छे वर्षों में विनियमन तेजी से हुआ। इसके साथ ही वित्तीय बाज़ारों के विकास को आगे बढ़ाया गया। 2008 में वैश्विक वित्तीय संकट (जीएफसी) के आगमन पर क्रमिक सुधार दृष्टिकोण सही साबित हुआ।

विनिमय दरों पर नीति ने विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप के माध्यम से विनिमय दरों में अत्यधिक अस्थिरता पर अंकुश लगाया और मुद्रा बाजार में पूर्वानुमान संबंधी समस्याओं को दूर करने के लिए उपाय अपनाए। बाजार स्थिरता का लक्ष्य प्राप्त हो गया। विदेशी मुद्रा भंडार प्रबंधन का उद्देश्य सुरक्षा, चलनिधि और प्रतिलाभ का अनुकूलन है। वित्तीय बाज़ारों के विकास के उपायों का उद्देश्य संरचनात्मक सुधार करना था जो मुद्रा बाज़ार पर ध्यान केंद्रित करने वाले संस्थानों, साधनों, प्रक्रियाओं और प्रतिभागियों को प्रभावित करते थे। इनसे मुद्रा बाज़ार को चलनिधि और सरकारी प्रतिभूतियों के लेन-देन प्रसारित हुआ । लेन-देन लागत में गिरावट आई। व्यापक आर्थिक स्थिरता और मजबूत आर्थिक विकास ने संक्रमण को सुविधाजनक बनाया। रिज़र्व बैंक ने सार्वजनिक ऋण प्रबंधन की एक विनियमित प्रणाली से बाज़ार-आधारित प्रणाली में परिवर्तन में प्रभावी भूमिका निभाई। इसमें प्रतिभूति बाजार में संस्थागत परिवर्तन, बैंक और सरकार के बीच बदले हुए संबंध और प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं में संशोधन शामिल थे। रिज़र्व बैंक ने नए राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) कानून में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने गिल्ट पोर्टफोलियो के सक्रिय समेकन की शुरुआत की और ऋण और मौद्रिक प्रबंधन को अलग करने की आवश्यकता का प्रचार किया। राज्यों के ऋण प्रबंधन में दूरगामी परिवर्तन हुए। रिज़र्व बैंक ने परामर्श, आपसी विश्वास और संवाद के माध्यम से राज्यों के साथ सहयोग शुरू किया। इसने नकदी शेष के तरीकों और साधनों की प्रगति और निवेश पर रणनीति शुरू की।

रिज़र्व बैंक ने खुदरा और बड़े मूल्य के भुगतान और इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन सेवा और निधि अंतरण के लिए भुगतान और निपटान प्रणाली विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अत्याधुनिक भुगतान प्रणालियों के विकास ने कागज-आधारित से इलेक्ट्रॉनिक प्रणालियों में बदलाव का मार्ग प्रशस्त

किया। रिज़र्व बैंक ने भुगतान प्रणालियों पर भी निगरानी रखी। बाज़ारों और बैंक-विनियमित संस्थाओं के बीच इलेक्ट्रॉनिक भुगतान अनिवार्य कर दिया गया। 2004 में आरटीजीएस की शुरूआत और 2005 में राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण (एनईएफटी) का ऐतिहासिक विकास था। 2002 में सीसीआईएल की स्थापना के साथ, बाजारों में लेनदेन का निपटान मजबूत हुआ। इसके मूल में उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा और लेन-देन में सुरक्षा थी जो प्रौद्योगिकी की मदद से और कानूनी मुद्दों के समाधान से हासिल की गई थी जिसमें मुख्य रूप से भुगतान और निपटान प्रणाली अधिनियम, 2007 का अधिनियमन शामिल था।

मुद्रा प्रबंधन के क्षेत्र में, मुद्रा की कमी को दूर करने, नकली नोटों से निपटने और नोटों की गुणवत्ता में सुधार के लिए तकनीकी और वितरण संबंधी सुधार शुरू किए गए। 'स्वच्छ नोट नीति' ने नोटों की गुणवत्ता में सुधार को बढ़ावा दिया। अयोग्य नोटों की गिनती, छंटाई और ऑनलाइन नष्ट करने के लिए मुद्रा सत्यापन और प्रसंस्करण प्रणाली (सीवीपीएस), और श्रेडिंग और ब्रिकेटिंग सिस्टम (एसबीएस) ने प्रक्रिया को साफ किया और आंतरिक संचालन में दक्षता में सुधार किया। जैसे-जैसे स्वचालित टेलर मशीनों (एटीएम) ने लोकप्रियता हासिल की, बैंक नोटों के मूल्य बदल गए। जन जागरूकता अभियानों ने नकली नोटों की मात्रा में कमी आई।

बैंक विनियमन के मोर्चे पर, सरकार के साथ बातचीत के माध्यम से सुधार किए गए क्योंकि सरकार बैंकिंग प्रणाली के सबसे बड़े हिस्से की मालिक थी। प्रतियोगिता के माध्यम से उनके बीच समान अवसर स्थापित करने का प्रयास किया गया। प्रौद्योगिकी को तेजी से अपनाने, कम्प्यूटरीकरण, कुशल ग्राहक सेवा, नवीन उत्पादों की शुरूआत, युवा कर्मचारियों और तेजी से निर्णय लेने के कारण, निजी क्षेत्र के बैंकों ने जमा में अपनी हिस्सेदारी बढ़ा दी। 2007-08 के जीएफसी के सीमित प्रभाव से स्पष्ट रूप से व्यापक सुधारों का फल मिला, वित्तीय नवाचार और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देते हुए वाणिज्यिक बैंकों के प्रदर्शन में सुधार हुआ। गैर-बैंकिंग संस्थाओं के मामले में, प्रशासन और पारदर्शिता में सुधार के माध्यम से ग्राहकों के प्रति उनकी दक्षता और जवाबदेही में सुधार लाने पर ध्यान केंद्रित किया गया था। संस्थानों की परिस्थितियों में विविधता, क्षेत्रीय आर्थिक और राजनीतिक कारकों, दोहरे नियंत्रण और उन पर रिज़र्व बैंक के सीमित अधिकार के कारण, संक्रमण एक जटिल प्रक्रिया थी। परामर्श और बातचीत से सफलता मिली.

रिज़र्व बैंक ने ग्रामीण ऋण प्रणाली को उन्नत करने, भारतीय बैंकिंग कोड और मानक बोर्ड (बीसीएसबीआई) की स्थापना जैसी पहलों के माध्यम से ग्राहक सुरक्षा और सेवा को मजबूत करने और वित्तीय समावेशन को प्रसारित करने के लिए भी काम किया। जहां तक ग्रामीण ऋण के विनियमन का संबंध है, चुनौतीपूर्ण बैंकों को पुनर्जीवित करना और प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण प्रदान करना था। हालाँकि इस अवधि के दौरान किसानों का संकट और बैंकों की अनर्जक आस्तियाँ (एनपीए) बनी रहीं, प्राथमिकता क्षेत्र के उधारकर्ताओं का विस्तार, स्थानीय क्षेत्र के बैंकों और सहकारी समितियों में सुधार और सूक्ष्म वित्त और किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) के उद्भव ने सकारात्मक विकास का संकेत दिया । वित्तीय समावेशन की पहल जैसे कि बैंक-वार शिकायतों के प्रकाशन ने बैंकों को ग्राहक शिकायतों के निवारण के लिए अपने तंत्र को मजबूत किया है। कई नये खाते खोले गये. इससे रिज़र्व बैंक के बारे में लोगों की धारणा में बदलाव आया।

बैंक की मौद्रिक, नियामक और पर्यवेक्षी भूमिका में संचार के महत्व को ध्यान में रखते हुए, आंतरिक और बाह्य संचार पर जोर दिया गया। पारदर्शिता पर ध्यान देने के साथ, सूचना का प्रसार उसकी स्पष्टता, गुणवत्ता, कवरेज और समयबद्धता में वृद्धि के साथ किया गया। इस प्रकार, अपने सक्रिय नेतृत्व और प्रोत्साहनों, अवसरों, प्रशिक्षण और अपने कार्यबल के पुनर्गठन के माध्यम से मानव पूंजी पर जोर देने के कारण, रिज़र्व बैंक इस अवधि में एक सुदृढ़ और गतिशील संगठन बन गया।

सामग्री से समझौता किए बिना आसानी से पकड़ में आने वाला आकार किसी पुस्तक को पढ़ने लायक बनाता है। पंद्रह अध्यायों में विभाजित, इसमें रिज़र्व बैंक के सभी कार्यात्मक क्षेत्रों

जैसे मौद्रिक प्रबंधन, विदेशी मुद्रा बाजार, पूंजी खाते का प्रबंधन, विदेशी मुद्रा भंडार प्रबंधन, वित्तीय बाजार, सार्वजनिक ऋण प्रबंधन, भुगतान और निपटान प्रणाली, मुद्रा प्रबंधन, विनियमन और पर्यवेक्षण। वित्तीय प्रणाली, ग्रामीण ऋण, वित्तीय समावेशन, संचार नीति और संगठनात्मक परिवर्तन को शामिल किया गया है। यह केवल रिज़र्व बैंक का एक कथात्मक इतिहास नहीं है; यह यह समझने में रुचि रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए एक समृद्ध संसाधन है कि एक उभरते बाजार का केंद्रीय बैंक कैसे परिवर्तन का प्रबंधन करता है, चुनौतियों का समाधान देता है और सक्रिय और दूरदर्शी सुधारों के माध्यम से अर्थव्यवस्था के विकास को आकार देता है। रिज़र्व बैंक की स्वायत्तता, डेरिवेटिव, प्रतिभूतियों के पंजीकृत ब्याज और मूलधन की अलग-अलग ट्रेडिंग (एसटीआरआईपीएस), मौद्रिक और ऋण प्रबंधन को अलग करना, भारतीय वित्तीय प्रणाली कोड, और नोटों में अशोक स्तंभ से महात्मा गांधी शृंखला के परिवर्तन जैसे विभिन्न विषयों से सुसज्जित होने के कारण इसे पढ़ने में दिलचस्प बनाते हैं। इसके अलावा, दिलचस्प बहसें, विचार, असहमति, विचार, मुद्दे, रूपरेखा, तर्क, अवधारणाएं, प्रख्यात नीति निर्माताओं के उद्धरण, मूल सूचनाएं और पत्र, और ऐतिहासिक घटनाओं और व्यक्तियों की तस्वीरें हैं। इस प्रकार, आम आदमी, नीति-निर्माता, शोधकर्ता, छात्र आदि सभी के लिए इसमें एक भूमिका है।

VII. परिप्रेक्ष्य

रिज़र्व बैंक का इतिहास भारत के आर्थिक और वित्तीय परिदृश्य पर एक व्यापक दृष्टिकोण देता है। यह बैंक के प्रारंभिक चरण, संस्था निर्माण, वित्तीय बुनियादी ढांचे में परिवर्तन, वित्तीय क्षेत्र में विस्तार, बाहरी संकट का प्रबंधन, वित्तीय क्षेत्र में सुधार और एक आधुनिक प्रणाली की नींव रखने के साथ-साथ परिवर्तन के प्रबंधन के महत्वपूर्ण विषयों पर एक ग्रंथ है। यह एक प्रेरक कहानी है कि कैसे एक विकासशील देश के केंद्रीय बैंक ने राष्ट्र के निर्माण में योगदान दिया और इसे नई ऊंचाइयों पर ले गया।

रिज़र्व बैंक ने संस्थागत ऋण और वित्तीय बुनियादी ढांचे के साथ एक विविध वित्तीय प्रणाली के विकास में उत्प्रेरक की भूमिका निभाकर अर्थव्यवस्था के बहुआयामी विकास के लिए एक प्रवर्तक के रूप में कार्य किया। कई गैर-पारंपरिक कार्यों के साथ, इसने जिम्मेदारियों का एक बड़ा और विविध दायरा उठाया। अपनी प्रारंभिक दृष्टि और दूरदर्शिता के साथ, यह जमा बीमा और अनुसंधान के लिए एक समर्पित आंतरिक विभाग जैसी प्रणालियों की स्थापना में वैश्विक अग्रणी बन गया, जिसने समय-समय पर उत्पन्न होने वाली कई नीतिगत दुविधाओं के समाधान में योगदान दिया। रिज़र्व बैंक ने विश्व युद्ध, विदेशी मुद्रा संकट, बैंकिंग संकट, तेल संकट, भुगतान संतुलन संकट, एशियाई संकट और मुद्रास्फीति के विभिन्न प्रकरणों जैसे कई संकटों में एक व्यापक आर्थिक स्थिरताकर्ता के रूप में भी काम किया। चुनौतियाँ कठिन थीं, लेकिन उनका समाधान समझदारी से किया गया। समय की ज़रूरतों के अनुसार नीतियों और कार्यों को नया स्वरूप दिया गया। पिछले कुछ वर्षों में अनेक नये कार्य भी हाथ में लिये गये। कई नई प्रणालियाँ जोड़ी गईं, सुधार लागू किए गए और नवीन दृष्टिकोण के साथ गैर-पारंपरिक नीतियों और रणनीतियों को अपनाया गया।

इस कहानी में कई अनमोल बातें हैं। अपनी सार्वजनिक नीति में दीर्घकालिक दृष्टिकोण, गतिशीलता और प्रतिबद्धता के साथ, रिज़र्व बैंक ने देश को कई क्षेत्रों में बदल दिया और इसे नई और उच्च कक्षाओं में स्थापित किया। रिज़र्व बैंक की यह प्रलेखित यात्रा एक उदाहरण स्थापित करती है कि क्रमिकता, सतर्क अनुक्रमण और सुधारों के उचित समय, नीतियों के उचित मिश्रण, गतिशीलता की भावना और समय की जरूरतों के अनुरूप आर्थिक प्रबंधन में आदर्श बदलाव के साथ, देश के आर्थिक लक्ष्य देश को टिकाऊ आधार पर हासिल किया जा सकता है। आर्थिक प्रबंधन में भारत के अनुभव से पता चला है कि समग्र और एकीकृत दृष्टिकोण पथ पर लगातार आगे बढ़ने में सक्षम बनाता है। नई संभावनाओं के समावेश के साथ-साथ समय-परीक्षणित उपायों का एक इष्टतम संयोजन केंद्रीय बैंकिंग नीति के लिए एक सफल रणनीति साबित हुई है। देश की राजकोषीय वास्तुकला के निर्माण, नवीन मौद्रिक साधनों के विकास और उन्हें लागू करने तथा राजकोषीय-मौद्रिक उद्देश्यों के संतुलन में रिज़र्व बैंक का योगदान मौद्रिक-राजकोषीय

समन्वय के महत्व पर प्रकाश डालता है। वर्षों से मानव और अन्य संसाधनों के विकास के साथ मिलकर इसका अपना संगठनात्मक विकास और परिवर्तन एक उदाहरण स्थापित करता है और संदेश देता है कि संगठनात्मक क्षमता निर्माण हमेशा लंबे समय में लाभ देता है। मौजूदा कार्यों के निरंतर पुनर्विन्यास, उभरती चुनौतियों के समाधान के लिए नए क्षितिज की खोज और नए अवसरों का लाभ उठाने के दृष्टिकोण के साथ, रिज़र्व बैंक ने देश के लिए एक सक्षम और स्थिरकर्ता की भूमिका निभाई है। कुल मिलाकर, रिज़र्व बैंक का इतिहास राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के निर्माण और विकास में भारत के केंद्रीय बैंक और उसकी नीतियों और संचालन के योगदान को दर्शाता है, और यह देश की आर्थिक यात्रा का प्रतिबिंब है । यह वैश्विक आर्थिक क्षेत्रों में यात्रियों की आगे की यात्रा को सदैव प्रेरित और मार्गदर्शन करता रहेगा। यह यात्रा करने वाली सड़क पर प्रकाश डालकर आगे की सड़क दिखाने वाले लैंप पोस्ट के रूप में कार्य करता रहेगा।

VIII. निष्कर्ष

आर्थिक इतिहास की रिकॉर्डिंग महत्वपूर्ण है क्योंकि यह समय और संदर्भ विशिष्ट नीति प्रतिक्रियाओं में अंतर्दृष्टि के माध्यम से नीतिगत दुविधाओं को हल करने में मार्गदर्शन करती है। भारतीय रिज़र्व बैंक दुनिया के उन कुछ केंद्रीय बैंकों में से एक है जिसने अपने इतिहास का प्रकाशन शुरू किया। हाल ही में पांचवें खंड के जारी होने के साथ, रिज़र्व बैंक ने अपने इतिहास के एक बड़े हिस्से का दस्तावेज़ीकरण पूरा कर लिया है। यह स्पष्टता से लिखा गया एक प्रामाणिक और निष्पक्ष विवरण है। पांच इतिहास खंड रिज़र्व बैंक के प्रारंभिक चरण, इसकी नीतिगत पहल, वित्तीय बुनियादी ढांचे में परिवर्तन, संकटों का प्रबंधन, परिवर्तन की प्रक्रिया और सुधारों की शुरूआत का व्यापक विवरण देते हैं जिससे आधुनिक प्रणालियों का निर्माण हुआ। देश के आर्थिक और वित्तीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा, इन इतिहास खंडों में उस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक की नीतियों और संचालन में विकास की बहुमूल्य जानकारी और विश्लेषण दिलचस्प तरीके से शामिल है। यह स्थायी और प्रेरक संस्थागत स्मृति है जो भविष्य में समसामयिक नीतिगत निर्णयों के लिए व्यावहारिक मार्गदर्शन देती रहेगी।

संदर्भ

Blum Matthias and Colvin Christopher L. (2018), "An Economist's Guide to Economic History", *Palgrave Macmillan.*

Crafts, Nicholas (1977), "Industrial Revolution in England and France: Some Thoughts on the Question, "Why was England First?", *Economic History Review*: 30 (3).

Capie, F., C. Goodhart, S. Fischer, and N. Schnadt (1994), "The Future of Central Banking", *Cambridge: Cambridge University Press.*

Capie, Forrest (2010), "The Bank of England: 1950s to 1979", *Cambridge University Press.*

Clapham, Sir John (1944), "Bank of England: A History", *Cambridge University Press*, Vol. 1, 1694-1797.

Goodhart, C.A.E. (1988), "The Evolution of Central Banks", *London: MIT Press.*

Hennessy, Elizabeth (1992), "A domestic history of the Bank of England, 1930-1960", *Cambridge University Press.*

https://rbi.org.in/scripts/briefhistory.aspx

https://rbi.org.in/scripts/chronology.aspx

https://rbi.org.in/scripts/functional.aspx

https://rbi.org.in/Scripts/project.aspx

https://rbi.org.in/scripts/BS_SpeechesView.aspx?Id=830

https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/PressRelease/PDFs/IEPR92IN1211.pdf

https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/Speeches/PDFs/69399.pdf

https://rbi.org.in/scripts/BS_PressReleaseDisplay.aspx?prid=14473

Milward, Alan S. (1992), "John Fforde, The Bank of England and Public Policy 1941–1958", Cambridge: Cambridge University Press", *Financial History Review* 1, no. 2: 212-214.

RBI (1970), "The Reserve Bank of India" (Volume 1), Reserve Bank of India.

RBI (1998), "The Reserve Bank of India" (Volume 2), Oxford University Press.

RBI (1998), "Dr. Rangarajan Releases RBI History (1951-67), Press Release, Reserve Bank of India, March 31 ((https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/PressRelease/PDFs/2344.pdf)

RBI (2005), "The Reserve Bank of India" (Volume 3), Reserve Bank of India.

RBI (2006), "History of The Reserve Bank of India", Press Release, Reserve Bank of India, March 18 (https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/PressRelease/PDFs/69367.pdf).

RBI (2006), "History of the Reserve Bank of India", Box IX.4, Annual Report 2005-06, Reserve Bank of India, August.

RBI (2013), "The Reserve Bank of India" (Volume 4), Academic Foundation.

RBI (2013), "Prime Minister's Remarks on Releasing A Volume: History of the RBI", Press Release, Reserve Bank of India, September 10 (https://rbi.org.in/scripts/BS_ViewBulletin.aspx?Id=14404)

RBI (2013), "PM Releases Fourth Volume of RBI History (1981-97)", Press Release, Reserve Bank of India, March 31 ((https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/PressRelease/PDFs/ENP336BR0813.pdf).

RBI (2022), "The Reserve Bank of India" (Volume 5), Cambridge University Press.

RBI (2022), "RBI Releases Fifth Volume of Reserve Bank History (1997-2008)", Press Release, Reserve Bank of India, December 19 (https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/PressRelease/PDFs/PR140927129D2997604CB8B0E2080BE27A1184.PDF).

Subbarao D. (2013), "RBI History – Looking Back and Looking Ahead", RBI Bulletin, Reserve Bank of India, September (https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/Bulletin/PDFs/04_SP10092013.pdf).